SHIKSHA SAMVAD
International Open Access Peer-Reviewed & Refereed
Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
Volume-1, Issue-3, March- 2024
www.shikshasamvad.com

हिंदी में दलित साहित्य का आगमन

डॉ. दिनेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर- हिंदी
आचार्य नरेंद्र देव किसान पी जी
कॉलेज बभनान गोण्डा

सारांश :

इस दुनिया में यदि इंसानों को जातियों में विभाजित करेंगे तो सिर्फ दो ही जाती मिलेगी- स्त्री और पुरुष। इन्हीं दोनों के मिलने से संपूर्ण संसार में मनुष्य जीव का निर्माण होता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि स्त्री और पुरुष संपूर्ण मनुष्य हैं और उनसे संबंधित जितने भी क्रियाकलाप है वही जीवन है। इस देश में जाति व्यवस्था की कल्पना है और इन्हीं लोगों के बीच अनेक जातियां हैं जो कुछ विशेष लोगों को विकास के पथ पर अग्रसारित करती हैं तो कुछ का विनाश करती हैं। मानवीय व्यक्ति के लिए जाति-व्यवस्था की कल्पना ही शोषण करने के लिए की गई है। तो लोगों में समतामूलक समाज बनाने में अत्यंत कठिनाई होगी ही। संसार में संपूर्ण इंसान एक समान है। सभी के दो हाथ, दो पैर, दो नाक, दो कान, सावला, गोरा रंग इत्यादि है तो इनमें जाति-व्यवस्था कहां से आ गयी? जाति व्यवस्था सिर्फ इसलिए आई है कि वह कुछ विशेष लोगों का शोषण करके अपना विकास कर सके।

साहित्य का निर्माण सदैव मानव से होता है। मानवीय जीवन में अनेक प्रकार की व्याप्त समस्याओं को साहित्य विनष्ट कर देता है। यह कहना उचित होगा कि सभी मानव के मानवीयता को केंद्र में रखकर उसके खिलाफ हो रहे अत्याचार चरम पर होता है तो साहित्यकार साहित्य के मध्य से उसकी आवाज को बुलंद करता है। इस देश में जो कुछ लोग दबे, कुचले हैं वे अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को लोगों के सामने रखने में असमर्थ थे लेकिन आज वे अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को लोगों के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं। इसलिए आज साहित्य का रूप अलग हो गया और उसके द्वारा गढ़ा गया साहित्य है वह गढ़ी गढ़ायी सौंदर्यशास्त्र के 'कला के मानदंड में तोड़-फोड़ करके आगे आ रहा है। उस साहित्य को दलित साहित्य के नाम से जाना जाता है। अब प्रश्न खड़ा होता है कि दलित कौन है? क्या दलित साहित्य दलित ही लिखेगा आदि ऐसे कई प्रश्न मन में उथल-पुथल मचाते हैं। इन सभी पर चर्चा होना अति आवश्यक है।

सबसे पहले यह स्पष्ट होना चाहिए कि दलित कौन है? इसके संदर्भ में शरण कुमार लिंबाले बताते हैं कि दलित किसे कहा जाये- "दलित केवल नवबौद्ध नहीं। गांव की सीमा के बाहर रहने वाले सभी अछूत जातियां, आदिवासी, भूमिहीन, खेतिहर, मजदूर, श्रमिक,

कष्टकारी जनता और पायावर जातियां सभी दलित शब्द से व्याख्यायित होती हैं। दलित शब्द की व्याख्या में केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से काम नहीं चलेगा। इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों का भी समावेश करना होगा।"**1** स्पष्टतः कहा जा सकता है कि जिसे सदियों से वंचित किया गया हो, जिसका हक और अधिकार छीन लिया गया हो, जिसे सिर्फ गुलामी करने के लिए विवश कर दिया गया हो उसे ही दलित कहना ज्यादा उचित होगा।

दलित साहित्य क्या है?

अस्पृश्यों के जीवन की संपूर्ण क्रिया कलाप जिस साहित्य में स्पष्टतः प्रकट हो उसे दलित साहित्य कहा जाये डॉ. शरण कुमार लिंबाले के अनुसार 'दलितों का दुःख, परेशानी, गुलामी, अधः पतन और उपहास के साथ ही दरिद्रता का कलात्मक शैली से चित्रण करने वाला साहित्य दलित साहित्य है। आह का उदान्त स्वरूप अर्थात साहित्य।"**2**

इंसान के प्रति इंसानियत को सिखाने वाला, और मानव के प्रति मानवता की वाचना करने वाला साहित्य दलित साहित्य है। मुख्यधारा के साहित्य में केवल अलौकिकता का खूब वर्णन होता है जबकि इस साहित्य में सिर्फ मनुष्य को ही स्थान दिया जा रहा है। उसी से संबंधित संपूर्ण बातें कही जाती है।

उद्भव और विकास-

दलित साहित्य का उदभव और विकास कब से हुआ है इस संबंध में स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। पहली बार इस संसार में जब किसी इंसान को प्रताड़ित किया गया होगा, तो उसके विरुद्ध वह लिखित विद्रोह किया होगा और अपने हक अधिकार के लिए लड़ा होगा तो वहीं से दलित साहित्य की शुरुआत की पहली तम मानना चाहिए। दलितो द्वारक विकास के लिए चर्चा सदियों से होती है। वर्ण-व्यवस्था का विरोध तथागत बुद्ध ने पुरजोर रूप से किया। सभी इंसान में इंसानियत जैसी विशेषता होती है इसलिए बुद्ध ने इंसान को इंसान ही समझते थे। की समस्याओं को देखकर दयानंद सरस्वती ने छदम रूप से इनके उद्धार के लिए संघर्ष किया किंतु वे वर्ण एवं जाति-व्यवस्था में सुधार करने का प्रयत्न ही नहीं किया लेकिन इन अश्पृसयों / दलितों को वर्ण व्यवस्था के अन्दर रखने का विचार रखते थे न कि इस वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था को समाप्त करने के कुछ वर्षों बाद दलितों की चेतना जागृत हुई वह अपने हक और अधिकार के लिए सचेत हुए। अश्पृश्यों दलितों की चेतना जागृत होने का मूल आधार महाराष्ट्र के रहने वाले महात्मा ज्योतिराव फूले एंव बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर हैं। इसलिए दलित साहित्य की प्रथम किरण महाराष्ट्र से निकलती है और उसकी पहली भाषा मराठी होती है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने छुआ-छूत, जातिवाद का दंश खूब झेला है। इस समाज की कटु यथार्थ अपने आत्मकथा में अच्छी तरह से अभिव्यक्त किए हैं। वसंत मून द्वारा संपादित पुस्तक 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरः राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज नाम से किया है। जो संपूर्ण वांड्मय बाहर (12) में संकलित है। इस पुस्तक को महाराष्ट्र सरकार ने 1993 ई में शिक्षा विभाग ने प्रकाशित किया। इनकी आत्मकथा जीवन संघर्ष छः भागों में विभाजित है। इनकी आत्मकथा को कोलंबिया विश्वविद्यालय में वेटिंग फस्ट वीजा को अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है जबकि भारत में डॉ अम्बेडकर को उपेक्षित रखा गया है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद दलित समुदाय कि मुक्ति की संघर्ष यात्रा की गति धीमी पड़ गई। संविधान के लागू होने के बाद इनको कुछ अधिकार प्राप्त हुए है लेकिन वह भी पूर्ण रूप से नहीं मिला। राजनीतिक परिवर्तन होने से शोषण के वेड़ियों से मुक्त कराने के लिए इनके हक अधिकार के लिए समय-समय पर बहस होती रहती है। आज के समय में दलितों के जीवन से संबंधित जरूरी सुविधाएं

इंसान की तरह मिले इसलिए इनकी समस्याओं को पूरे भारत में चर्चा चल रही है। इसके साथ-साथ विश्व के कई देशों में दलितों की मुक्ति के लिए आंदोलन भी चल रहे हैं।

हिंदी में दलित साहित्य: उद्भव और विकास-

सन् 1914 ई. में सरस्वती पत्रिका में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हीराडोम द्वारा रचित अछूत की शिकायत नामक कविता प्रकाशित की थी। इस रचना को दलित काव्य धारा कि पहली कृति कहा जाता है। कई वर्ष तक दलितों से संबंधित कोई रचना प्रकाश में नहीं आयी। कई वर्षों बाद ठाकुर का कुआं, कफन, सदगति, रंगभूमि, निराला की कुल्लीमाट, देवी, चतुरी चमार, नागार्जुन की हरिजनगाथा, राहुल सांकृत्यायन की वोल्गा से गंगा इत्यादि कृतियों में दलितों की संवेदना, व्यक्त हुई हैं। साहित्य में जो दलित संवेदना व्यक्त हुई है वह गैर दलित द्वारा व्यक्त की गयी है। इस समय तक किसी दलित ने अपनी संवेदनाओं को साहित्य में अभिव्यक्ति नहीं की इसलिए काफी दिनों तक दलितों की संवेदनाएं साहित्य में चरम रूप में नहीं आई। दलितों की कृतियों एवं उनसे संबंधित अनेक प्रश्नों को हंस, सारिका, युद्धरत आम आदमी, संचेतना पत्रिकाओं में उठाया जाता रहा है। प्रथम दलित कहानी प्रहलाद चंद्र दास की लटकी हुई शर्त युद्धरत आम आदमी में सन् 1987 ई. में छपी। छप्पर नामक उपन्यास जयप्रकाश कर्दम ने दलित साहित्य को प्रथम उपन्यास दिया।

आज के समय में हिंदी में दलित साहित्य एक आंदोलन की तरह चल रहा है। कई लेखकों ने अपनी कविताएं, कहानियां, उपन्यास को लिखा है। आत्मकथा मोहनदास नैमिशराय की अपने-अपने पिंजरे, जूठन आत्मकथा ओमप्रकाश वाल्मीकि की, मुर्दहिया डॉ. तुलसीराम की इत्यादि आत्मकथाएं उल्लेखनीय है। हिंदी में दलित महिलाओं की आत्मकथाएं दोहरा अभिशाप, पिंजरे का दर्द आदि प्रकाशित हुई है। डॉ. धर्मवीर का नाम आलोचना के क्षेत्र अग्रणी रूप से लिया जाता है। इनकी आलोचनात्मक पुस्तक कबीर के आलोचक अत्यधिक प्रसिद्ध है। यह पुस्तक लेखनी को एक नए सांचे में गढ़ती है तथा उनके आलोचकों को एक नई दृष्टि से देखने का प्रयास है। हिंदी भाषी दलित साहित्य के जो लेखक और लेखिकाएं हैं वे अत्यंत सक्रिय हैं। दलित साहित्य में अनेक साहित्यकारों का नाम उल्लेखनीय हैं- टी.पी. सिंह, सूरजपाल चौहान, जयप्रकाश कर्दम, मलखान सिंह, कुसुम वियोगी, राधाकृष्ण राजपूत, प्रेम कपाड़िया, सी.बी. भारती. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बी.एस. नैय्यर, मोहनदास नैमिशराय, डॉ. धर्मवीर, शत्रुधन कुमार, प्रहलादचंद्र दास, कावेरी, दयानन्द बटोही, रजत रानी मीनू श्यौराज सिंह बेचैन, लालचंद्र राही, कंवल भारती, विपिन विहारी, माता प्रसाद, रूपनारायण सोनकर, अनीता भारती. आर.डी आनंद, रजनी तिलक, विमल थोराट, सूरज बडत्था इत्यादि।

कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, हिंदी दलित साहित्य में सभी रचनाएं प्राप्त होती हैं। दलित साहित्यकारों ने अपने जीवन संघर्ष, दुख-दर्द, समाज द्वारा हो रहे शोषण, अत्याचार इत्यादि का वर्णन अपनी आत्मकथा में ही किए हैं। इन्हीं कारणों से इनकी रचनाशीलता पर प्रश्न खड़े किए जा रहे हैं। तर्क दिया जा रहा है कि अपने ऊपर हुए शोषण को आत्मकथा में अभिव्यक्त कर देने के अलावा इनके पास लिखने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं। सभी इंसानों के पास उसकी अपनी एक कहानी होती है, उस कहानी के साथ-साथ वह समाज का अभिन्न अंग है इसलिए समाज में हो रहे शोषण, अत्याचार, छुआछूत, जातिवाद इत्यादि व्यक्त की सामग्री है। दलित साहित्यकारों के पास आत्मकथा के सिवाय बहुत कुछ कहने के लिए शेष बचा रहता है इसलिए साहित्य के माध्यम से वे बहुत कुछ कहते रहेंगे। इन पर आत्मकथा को लेकर जो आरोप लग रहा है आत्मकथा के बाद इनके पास कुछ नहीं बचेगा वह एकदम बिना आधार के लगाया गया सिद्ध हो रहा है क्योंकि उसका परिणाम लगातार आ रहा जिसे दलित साहित्य में देखा जा सकता है। साहित्यकार अपने समय में सभी एक रसीय होते हैं क्योंकि वह अपने जीवन को ही साहित्य में व्यक्त करता है।

दलित साहित्य में अम्बेडकरवाद-

दलित साहित्य अम्बेडकरवाद पर आश्रित है। डॉ. अम्बेडकर का दर्शन बौद्धवाद है। बौद्ध की विचारधारा यह मानकर चलती है कि इस संसार में जन्म से ना कोई शूद्र है और ना ही कोई ब्राह्मण। मनुष्य का जैसा कर्म होगा वैसा वह शूद्र और ब्राह्मण कहलायेगा। यह दर्शन संपूर्ण रूप से मानवतावादी है। संप्रदाय कोई भी हो वह प्रत्येक जीवन को सुखदाई बनाता है। दलित समुदाय सदियों से प्रताड़ित है, उपेक्षित है, घृणित है इसी तरह से दलित साहित्य भी सदियों से घृणित और उपेक्षित है। इसलिए जो घृणित, उपेक्षित, उत्पीड़ित हैं ऐसे लोगों द्वारा लिखा गया साहित्य दलित साहित्य है। प्लेटो का आदर्शवाद विशेष रूप में परिलक्षित होने लगे तो वह दलितों की विचारधारा से मिलता है। क्योंकि प्लेटो योग्यता का पुजारी है। रूसो, अरस्तु और गांधी इत्यादि विचारक मनुष्य के मुक्ति के समर्थक हैं फिर भी वह किसी ना किसी रूप में राज्य द्वारा निर्धारित किए गए सिद्धांतों को स्वीकार भी करते हैं। दलित साहित्य इनके विचारधारा से मेल नहीं खा पाती है इस साहित्य की विचारधारा मार्क्सवाद और अम्बेडकरवाद की विचारधारा से अत्यंत करीब है। इन्हीं आधार पर डॉ. तुलसीराम कहते हैं कि डॉ. भीमराव आम्बेडकर की विस्तृत विचारधारा ही दलित साहित्य की मुख्यधारा है। दलित साहित्य में बुद्ध मार्कस और अम्बेडकर की विचारधारा ग्रहण किए जा रहे हैं इसके निम्नलिखित कारण हैं-

1. यह अभिव्यक्ति को महत्व देता है।
2. यह जनवादी साहित्य है।
3. यह मनुष्य को साहित्य का लक्ष्य मानता है।
4. यह आदर्शवाद एवं कलावाद का बहिष्कार करता है।
5. यह यथार्थ को अत्यन्त महत्व देता है।

दलित साहित्य की परिभाषा-

साहित्यकारों ने दलित साहित्य की निम्नलिखित परिभाषाएं दी हैं-

1-ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार - "दलित साहित्य भाषावाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद को नकारता है। सूत्र में पिरोने का कार्य करता है। दलित शब्द उन्हें सामाजिक पहचान देता है जिनकी पहचान इतिहास के पृष्ठों से सदा के लिए मिटा दी गयी, जिनकी गौरवपूर्ण संस्कृति, ऐतिहासिक धरोहर कालचक्क में खो गई।"**3**

2- मोहनदास नैमिशराय-"चलित साहित्य यानि बहुजन समाज के सभी मानवीय अधिकारों और मूल्यों की प्राप्ति के उद्देश्यों से लिखा गया साहित्य है, जो संघर्ष से उपजा है, जिसमें समता और बंधुता का भाव है और वर्ण-व्यवस्था से उपजे जातिभेद का विरोध है।"**4**

3- माता प्रसाद- "दलित साहित्य वह साहित्य है, जो सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक क्षेत्रों में पिछड़े हुए उत्पीड़ित, अपमानित, शोषितजनों की पीड़ा को व्यक्त करता है। दलित साहित्य कठोर अनुभव पर आधारित साहित्य है। दलित साहित्य में आक्रोश और विद्रोह की भावना प्रमुख है।"**5**

4- डॉ. एन. सिंह- "दलित का अर्थ है, जिसका दलन, शोषण और उत्पीड़न किया गया हो, सामाजिक, आर्थिक और मानसिक धरातल पर संपूर्ण दलित साहित्य ऐसी ही उत्पीडित, और शोषित लोगों की बेहतरी के लिए दलित लेखकों द्वारा लिखा गया साहित्य।"**6**

5- कँवल भारती- "दलित साहित्य वर्ण व्यवस्था से पीड़ित समाज की वेदना का शब्द रूप है।"**7**

6- सोहनपाल सुमनाक्षर- "दलित साहित्य दलितोंत्थान साहित्य, यानि दलितोत्थान हेतु लिखा गया, यह एक ऐसा साहित्य है जो भोगे हुए सच पर आधारित है। जमीन से जुड़े दलित, शोषित, उपेक्षित, सर्वहारा वर्ग से संबंधित है जो दशा एवं दिशा को इंगित करता है। जिसमें विद्रोह और उद्बोधन के साथ संवेदना जाग्रत करने की उर्जा है।"**8**

इन परिभाषा को देखते हुए हम कह सकते हैं कि दलित साहित्य समानता का भाव पैदा करने वाला साहित्य है। यह साहित्य भारत के विशेष संदर्भ में लोगों में उत्पन्न विषमता के भाव को समाप्त करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इन परिभाषाओं से स्पष्टतः कहा जा सकता है कि दलित समुदाय में उत्पन्न कवि/लेखकों द्वारा दलित के जीवन में जो अनेक विसंगतियां है उसी को आधार बनाकर लिखा गया साहित्य, दलित साहित्य कहलाता है। इस साहित्य के माध्यम से शोषित, अस्पृश्य समुदाओं में उत्पन्न शोषण, उत्पीड़न एवं उपेक्षित मानसिकताओं के विरुद्ध आवाज को बुलंद करने का प्रयास करता है। उस साहित्य में आक्रोश है, जो असमानता के विद्ध आंदोलन करता है, शोसकों के शोषण के खिलाफ विद्रोह करके शोषण से मुक्त होकर देश में समानता की भावना स्थापित करता है तथा जातिवाद का परम विरोधी है और सबको एक समान समझाता है।

व्यापक अर्थ में दलित साहित्य वह है जो शोषित व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। विस्तृत रूप से दृष्टि डाली जाये तो स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य भारत में रहने वाले बहुसंख्यकों का अर्थात् बहुजन का साहित्य है जो इस देश में बहुजनों (दलित, आदिवासी, पिछड़ा वर्ग) के साथ अभिजात्यवर्ग द्वारा हो रहे अत्याचार को यथार्थ रूप में लाकर पर्दाफास करने में पूर्ण रूप से समर्थ है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के ही अद्भुत सोच एवं चेतना का परिणाम है जिसको आधार बनाकर दलित द्वारा लिखा गया साहित्य हिंदी साहित्य की प्रमुख धारा बन चुकी है। कुछ साहित्यकार हिंदी में दलित साहित्य महाराष्ट्र के मराठी दलित साहित्य से प्रस्तावित हैं। इस साहित्य को केवल अछूत शूद्र एवं महार जाति तक सीमित नहीं रखना चाहिए क्योंकि यह समाज में अधिक लोगों (बहुसंख्यक, गरीब, मजदूर, शोषित, आछूत इत्यादि) को निर्विवाद दलित साहित्य ही रहना चाहिये तभी इसकी अपनी एक विशिष्ट पहचान बनी रहेगी।

वर्तमान में जो साहित्य की अवधारण है यह दलित साहित्य में मिलती है। उसमें वर्षों से चली आ रही ब्राह्मणवादी पुरोहित प्रधान दार्शनिक विचार परंपरा को नकारती है। लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व तथागत बुद्ध एवं महावीर स्वामी ने ब्राह्मणवादी विचारधारा का विरोध किया था। रहस्यवादी उपासना ग्रंथों का विरोध ऋषि चार्वाक ने भी किया। इन लोगों द्वारा हिंदू धर्म के अनेक धर्म ग्रंथों का खूब तार्किक ढंग से खण्डन किया गया। इन्हीं सबसे दलित साहित्य प्रतीक के रूप में मानते हैं। इस देश मैं ब्राह्मणों द्वारा बहुसंख्यक लोगों को पढ़ने के अधिकार से वंचित कर अज्ञानी बना दिया फिर इन्हें अनेक पाखंड, अंधविश्वास एवं आडम्बर में फंसा कर इन्हें मानसिक गुलाम बना लिया और इनका खूब शोषण किया। दलित विचारकों एवं लेखकों ने इस शोषण को भोगा है। ब्राह्मणों की दृष्टि में दलित नीच व अस्पृश्य है। ब्राह्मणों ने बताया इनकी दशा दैवीय विधान है तथा इनके पूर्व जन्मों का दंड है किंतु दलित साहित्यकारों ने इस परिपाटी को मानने से इंकार कर दिया है। उच्च वर्गीय द्वारा बनाए गए जाति-व्यवस्था, ऊंच-नीच व श्रेष्ठता को दलित विचारक थोड़ा सा भी महत्व नहीं देते हैं। यह सनातनी धर्म में व्याप्त कुसंस्कारों, सामाजिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों, वाहयाडम्बरों के प्रति घोर विद्रोहात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

दलित साहित्य, आज के समय में सदियों से शोषण के खिलाफ इंसानियत का एक स्वर है जो शोषण करने वाला, पितृसत्तात्मक समाज, ब्राह्मणवादी विचारधारा, पुरोहितपरक विशेष अधिकार रखने वाले इत्यादि ऐसे भारत के सामाजिक व्यवस्था को अस्वीकार करने वाला एक दस्तावेज है। दलित साहित्य प्राचीनकालीन ब्राह्मणवादी व्यवस्था, जर्जर पौराणिक मिथ्या की परंपरा के खिलाफ एक विद्रोह है क्योंकि यह व्यवस्था एक इंसान को दूसरे इंसान की तुलना करके ऊंच-नीच घोषित करती है तथा ऐसे निंदनीय व्यवस्था को वर्णवाद को

मान्यता देने वाले लोग ईश्वरीय आदेश स्थापित करता है। स्पष्टतः कहा जा सकता है कि दलित साहित्य ब्राह्मणवाद एवं उसकी विवारवारा का विरोध करता है।

कोई भी साहित्य मानव जीवन से उत्पन्न होकर सीधे मानव जीवन को प्रभावित करता है। इस देश में दलित समुदाय को अनेक प्रकार की यातनाएं दी गई हैं जिसके कारण उसे दर्द का अनुभव है, यही दर्द दलित साहित्य पीड़ित इंसानियत की अनुभूत प्रधान स्वर है और यही अनुभूति आक्रोश के स्वर में निखरी है। दलित साहित्य की प्रमुख विशेषताओं के रूप में अस्पृश्यों की आक्रोश की अभिव्यक्ति है। क्योंकि अस्पृश्यों को जानवरों की तरह कष्ट दे देकर जटिल से जटिल कार्य कराया गया है. उस समय कोई भी मौसम रहा हो गर्मी के मौसम में श्रम से निकली हुई उसकी सांसो की आवाजें, बेवजह मारने-पीटने से निकले आंसू, यातना से निकलने वाली कराहें अनंत गहराइयों के साथ उपस्थित है। स्त्रियों के शोषण एवं उत्पीड़न को भी दलित लेखकों ने मार्मिक रूप से चित्रित किया है। दलित समुदाय (स्त्री/पुरुष) का आक्रोश दलित साहित्य में सन्निहित है। आक्रोश एक जीवंत उदाहरण ओमप्रकाश वाल्मीकि की जूठन है।

दलित समुदाय अपने एवं अपने समाज की पहचान को जिस नवजागरण और समाज में हो रहे सामाजिक परिवर्तन के युग के रास्ते से गुजर रहा है वह इस भारत की क्रांतिकारी अध्याय है। दलित साहित्य को हिंदी साहित्य ने अपने में समेटकर तो रखा है फिर वह हिंदी साहित्य से अलग है क्योंकि हिंदी साहित्य जिन समस्याओं की तरफ नहीं देखता और उसे छूना पसंद नहीं करता है दलित साहित्य उन मुद्दों को केंद्र में रखता है तथा इसका लक्ष्य केंद्रित, पूर्ण रूप से प्रत्यक्ष एवं पूर्णतः स्पष्ट उद्देश्य होता है। यह साहित्य सिर्फ सुधारवादी, विचारधारा तक ही सीमित नहीं होता है बल्कि समाज में पूर्ण रूप से परिवर्तन लाने में विश्वास रखता है। जैसी स्थिति है उसी प्रकार के स्थिति को बनाए रखने के लिए एवं उसे स्थापित करने के लिए सभी प्रयासों की आलोचना एवं समीक्षा करता है दलित साहित्य। पुरानी परंपराओं को स्थापित करने वाले समर्थकों से सवाल करता है, जातिवाद से ग्रसित, सामाजिक व्यवस्था से ग्रसित, विशेष अधिकारों के आधार पर राजनीतिक संरचना, असमानता, ब्राह्मणवादी धार्मिक ढांचे के कारण अछूतपन की पीड़ा को भोगने वाले के रूप में, अस्पृश्य को जानवरों के समान जीवन बिताने के लिए दलितों को मजबूर कर दिया गया है। इंसानों की दृष्टि ऐसे लोगों पर क्यों नहीं जाती है? सनातनी धर्म ग्रंथ में मनुष्य के प्रति मनुष्यता नहीं दिखती है बल्कि वह अपना डर दिखाकर बहुजन समाज को सेवा करने के लिए बाध्य करता है और बहुजनों को मानवाधिकारों से दूर रखने का समर्थन करता है। ऐसे धर्म ग्रंथ को दलित साहित्य अस्वीकार कर देता है। ब्राह्मणवाद का विरोध करते हुए उसके वाहयाडम्बर, पाखंड, धर्म ग्रंथों में तर्क हीन मिथकों, पुनर्जन्म, वर्ण-व्यवस्था, भाग्य-दुर्भाग्य अवतारवाद, जातिवाद को अस्वीकार करता है और उसके विरोध में अपमानित शब्दों का भी विरोध करता है। दलित साहित्य का किसी भी देवी-देवता. सरस्वती से कोई संबंध नहीं रखता है क्योंकि वह मानता है कि वह भगवान द्वारा रचित नहीं बल्कि मानव ारा रचित आडम्बर है। दलित साहित्य शोषितजनों की आवाज है। इस संसार में लौकिकलोक में इंसानियत के प्रयासों से संपूर्ण समाज को बदलना चाहता है। इस देश में गढ़े गये मिथकों जो व्यक्ति को व्यक्ति के प्रति शोषक व्यक्ति बनाने में मदद करने वाले तथा धर्म की बुरी नीतियों का खत्म करने वाला है दलित साहित्य।

दलित समाज और सवर्ण समाज में सिर्फ आर्थिक अंतर ही नहीं है बल्कि शारीरिक शोषण, शिक्षा, बौद्धिकता, समाजिकता, और मानसिक संपन्नता के स्तर पर भी अन्तर बहुत है। इस अंतर को बनाए रखने के उद्देश्य से दलित समुदाय को स्वस्थ्य जीवन से एवं अन्य अधिकारों से दूर रखा गया है जिसके कारण दलित समुदाय में कुप्रथा, जादू-टोना, अंधविश्वास, पाखंड, रूढ़ियाँ, वाहयाडम्बर का चलन प्रचलन भी खूब रहा है। इन सभी को दलित साहित्य अपने विषय का प्रमुख अंग बनाता है और उसे रेखांकित करते हुए यह स्पष्ट करना चाहता है कि दलित समुदाय अपनी उन सभी समस्याओं का समाधान वहां खोज रहा है, जहां वास्तव में विद्यमान है। दलित समुदाय में श्रम

पर आधारित नये मिथकों का प्रयोग करने के लिए दलित साहित्य प्रेरणा देता है। गरीबी और जातिवाद दलित समुदाय की सबसे प्रमुख समस्या है। अपने इस परिस्थिति से दलित समुदाय मुक्ति पाने की इच्छा रखता है। दलित साहित्य यह स्पष्ट करता है कि दलितों की सभी समस्याओं की जड़ अज्ञानता है। दलितों को आर्थिक, सामाजिक रूप से संपन्न हो जाने के बाद उच्च वर्गीय लोगों की तरह आचरण नहीं करना चाहिए बल्कि ऐसे आचरण से दलितों को कोसों दूर रहना चाहिए। आज के समय में दलित समुदाय में से एक छोटा सा वर्ग विकास की मुख्यधारा में घुस गया है और वह आज के समय में पूंजीवाद व्यवस्था के उन भ्रमजालो एवं विरोधाभासों का शिकार हो चुके हैं इन्हीं कारणों से दलित वर्गों का उच्च पदों पर आसीन एवं शिक्षित दलित भी गरीब दलितों की तरह हीन दृष्टि से देखे जाते हैं। स्त्रियों को समानता का दर्जा देने के स्थान पर वे लोग पितृसत्तात्मक दृष्टि से उसका दर्जा निर्धारित करने के पक्ष में होते हैं।

दलित साहित्य वह है जो किसी भी प्रकार का अन्याय व अत्याचार हो उसके खिलाफ विद्रोही स्वर है। यह साहित्य किसी भी वर्ग/समुदाय के प्रति अत्याचार करने के लिए जोश नहीं डालता है बल्कि जो व्यक्ति अन्याय एवं अत्याचार से प्रताड़ित होकर कराहता है उसकी वाणी को अभिव्यक्ति देता है। सच्ची घटनाओं के आधार पर कटु प्रसंग होने के बाद भी जिस समाज ने अन्याय किया है उसका समाधान भी उसी समाज को ही करना पड़ेगा। जब तक भारतीय समाज में सोच नहीं बदलेगी तब तक स्थित में परिवर्तन आने वाला नहीं है। हम चाहे जितना संविधान में संशोधन कर ले वह किसी भी काम का नहीं होगा। देश को आजाद हुए इतने वर्ष बीत गये हैं फिर भी दलित समाज की स्थिति में बहुत सूक्ष्म बदलाव आया है फिर भी मूलभूत रूप से उसकी स्थिति जैसी की तैसी बनी पड़ी है। ज्यादा से ज्यादा दलित गरीबी रेखा के नीचे की श्रेणी में आते हैं. ज्यादातर प्रतिदिन मजदूरी प्राप्त कर जीवन यापन करने वाले मजदूर हैं. ये लोग अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में अपना जीवन यापन करते हैं। ऐसे लोगों का जीवन उच्च-स्तरीय बनाने के लिए अनेक प्रकार की योजना में राज्य के हिस्सेदारी, जरूरी क्षेत्रों में पर्याप्त व्यय, और अर्थ के क्षेत्रों में सुरक्षा की जरूरत है। दलित समुदाय आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रूप से अपने जीवन को उच्चस्तरीय बनाने के लिए प्रयास करते हैं। लेकिन सामाजिक रूप से पहले से स्थापित उच्च वर्णों द्वारा दलित समुदाय के पर हिंसात्मक विरोध सदियों से किया जाता रहा है। दलित वर्ग के नवयुवक उच्च स्तरीय शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं लेकिन वर्तमान में रोजगार के जितने भी अवसर है उसे निरंतर रूप से कम किये जा रहे हैं। दलितों की राजनीतिक नेतृत्व दलितों की भविष्य के प्रति अधिकतर उदासीन है। इसलिए इस साहित्य में हमेशा एक व्यंग का भाव रहता है। लेकिन यह व्यंगात्मक भाव राजनीतिक कुरूपता को समाप्त करने के लिए औषधि का काम करती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जो समाज सदियों से उपेक्षित हुई थी आज वह पीढ़ी शिक्षित हुई और वह तीक्ष्ण संवेदनशीलता के आधार पर मुख्यधारा की सामान्य साहित्य पढ़ने लगे तब उन्हें यह अनुभूति हुई कि इस साहित्य में दलित वर्ग की उपेक्षा और अनुभूति कहीं पर है ही नहीं। दलित साहित्य याचना, दया और करुणा का साहित्य बिलकुल भी नहीं है बल्कि यह स्वाभिमान व क्रांति विद्रोह का साहित्य है। यह साहित्य इतना विशाल है कि इसकी कोई विशेष परिधि नहीं है। यह न तो किसी एक भाषा में बांधा गया और न ही किसी धर्म या देश में बल्कि मनावता और नवमानवतावाद को समर्पित अभिव्यक्ति है।

जब दलित साहित्य के अर्थ एवं अवधारणा पर विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट होता है कि दलित लेखकों के सामने वर्तमान में अनेक प्रकार की चुनौतियां है। दलित साहित्य को अपने नये तेवर, नयी भाषा, नये संदेश के लिए, अपने नये प्रतिमान, नये रूप में सौंदर्यबोध और नए मुहावरे को नवीन रूप में विकसित करना है। वर्तमान में दलित साहित्य का लगातार विकास भी हो रहा है और इसकी भौगोलिक विचार दलित साहित्य मूल रूप से अपनी प्रमुख प्रवृत्तियों में नवीन उन्नति करती हुई परिस्थितियों की तरफ संकेत करता है। यह साहित्य जनता के लिए लोगों की समस्याओं को उठाता है और जन सामान्य की भाषा में इसे लिखा जा रहा है। राजनीति की दृष्टि से यह साहित्य

लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाने और इसमें सुदृढ बनाने के लिए समर्थन करता है। यह सामंतवादी व्यवस्था की सभी मान्यताओं को स्वीकार नहीं करता है जो हजारों वर्षों से जातिवाद, भेदभाव, छुआछूत, वंशवाद, ताप्रदायिकता को मानने से इंकार करता है। यह मानवीय मूल्य, समता, स्वतंत्रता, बंधुता, भ्रातृत्व एवं न्याय को अपनाने के लिए हमेशा पक्ष में रहता है। दलित साहित्य अर्थ की दृष्टि से साधना व क्षमता पर आधारित जो न्याय से उचित है उसी की ही वकालत करता है।

दलित साहित्य एक ऐसा साहित्य है जो साहित्य की पक्षधरता को भी पूर्णतः स्पष्ट करता है। यह प्रताड़ित इंसान व उसकी इंसानियत की तरफदारी करता है तथा सामाजिक आंदोलन को खड़ा करने का प्रयत्न भी करता है। बौद्धिकता के निर्माण में सबसे अधिक मुश्किल चुनौती नवीन मूल्य निर्माण किया है। मूल्यों के अनुसंधान में दलित साहित्य व्यवस्था को नकारने के साथ-साथ दलितों में इसके खिलाफ आक्रोश पैदा करता है। वस्तुतः आज संघर्ष करने वाले आम नागरिकों की आवाज को बुलंद करने वाला है दलित साहित्य। दलित साहित्य अपने में अनेक युगों से उत्पन्न मन में संभावनाओं को मिलाए हुए है। इसका एक-एक शब्द संघर्षों को अपने आंचल में समेटे हुए है तथा यह लगातार शोषित, प्रताड़ित, अभिशापित जीवन से मुक्त होने के लिए नवीन चेतना का आह्वान करता है। विद्रोह और क्रांति का शसक्त माध्यम है दलित साहित्य।

संदर्भ ग्रंथ

1- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र लेखक शरण कुमार लिम्बाले, अनुवादक- रमणिका गुप्ता, प्रकाशक- वाणी प्रकाशन, संस्करण 2012, पृष्ठ 29

2- दलित चेतना के संदर्भ में कथाकार ओम प्रकाश वाल्मीकि डॉ. जोगिंद्र कुमार संधू, प्रकाशक- साहित्य संस्थान गाजियाबाद, संस्करण 2012, पृष्ठ 26

3- हिंदी दलित कहानियां संघर्ष का मूल स्वर आशीष कुमार दीपांकर, प्रकाशक- वाङ्ङ्गमय बुक्स अलीगढ़, संस्करण 2016, पृष्ठ 34

4- वही पृष्ठ 33-34

5- वही पृष्ठ 33

6- वही पृष्ठ 33

7- वही पृष्ठ 33

8- वही पृष्ठ 33

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

SHIKSHA SAMVAD

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed or Refereed Research Journal
ISSN: 2584-0983 (Online) Impact-Factor, RPRI-3.87
Volume-01, Issue-03, March- 2024
www.shikshasamvad.com
Certificate Number-March-2024/37

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

डॉ. दिनेश कुमार

For publication of research paper title

"हिंदी में दलित साहित्य का आगमन"

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-01, Issue-03, Month March, Year- 2024, Impact-Factor, RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.shikshasamvad.com